ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-1* Issue-11* December-2016
Innovation The Research Concept

मुगल कालीन भारत में तांबे का विकास

सारांश

मुगलकाल में तांबे की अत्यधिक प्राचीन खानें उत्तरी भारत में पायी जाती थीं। बिहार के सिंहभूमि जिले में तांबे की लगभग अस्सी मील लम्बी पट्टिका थी और यहां पर प्राचीन समय से तांबे खनन किया जाता था।[1] किन्तु सोलहवीं शताब्दी से अट्ठारहवीं शताब्दी के बीच यहां पर तांबे का खनन किया गया हो इसकी सूचना नही मितली है। तांबा कुमायूं और बेरात (अलवर सरकार में) मिलता था। बेरात का तांबा इतना अधिक लाभप्रद था कि इसके एक मन के अयस्क से लगभग 35 सेर धातु प्राप्त होती थी। इसी प्रकार राजपूताना के चैनपुर, सिंघाना, उदयपुर, कोटपुतली और बंबई स्थानों पर पाये जाने वाले तांबे के भण्डार अत्यधिक समृद्ध थे।

मुख्य शब्द : तांबा, सुकेतमण्डी, मिश्रित धातुयें, टकसाल

राधाकृष्ण दुबे
एसोसिएट प्रोफेसर,
भूगोल विभाग,
एम0डी0पी0जी0 कालेज,
प्रतापगढ़ (उ0प्र0)।
इलाहाबाद राज्य
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

प्रस्तावना

नरनौल के निकट रायपुरी तथा अन्य ग्रामों में स्थित तांबे की खानों की उत्पादकता इतनी पर्याप्त थी कि रायपुरी की स्थानीय तांबे की टकसाल को इस धातु की पूर्ति की जाती थी।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत प्रपत्र का उद्देश्य मुगल कालीन भारत में तांबे का विकास का अध्ययन करना है।

भौगोलिक अध्ययन

किशनगढ़ और दक्षिण–पश्चिम की सीमाओं पर स्थित जरी तथा कलीकुई स्थानों पर भी इन खानों के होने का उल्लेख मिलता है। लाहौर सूबे में सुकेतमण्डी की खानों को छोड़कर अन्य किसी स्थान पर तांबे की खानों के स्पष्ट संकेत नहीं मिलते हैं। सुकेतमण्डी का तांबा घटिया होता था तथा इसमें लाभ का अंश भी बहुत कम था। इन खानों पर कार्य करने की पद्धति अयस्क निकालने की प्रक्रिया अथवा तांबे की चादरों के काम में आने वाली सामग्रियों में परिवर्तित करने की विधि आदि का उल्लेख नही मिलता। आइन से इतना अवश्य पता चलता है कि शुद्ध तांबे से मिश्रित धातुएं बनायी जाती थीं। तांबे की चार सेर मात्रा के साथ एक सेर टिन मिलाकर कांसा तैयार किया जाता था। पीतल में तांबे और रुह–ए–तूतिया का अनुपात 2.5 : 1 था, इस अनुपात में परिवर्तन कर पीतल की विभिन्न किस्में प्राप्त की जाती थीं। सिक्के को छोड़कर इन मिश्रित धातुओं का सभी कार्यों के लिए प्रयोग होता था। टिन, तूतिया और जस्ता, तांबे की तुलना में सस्ते थे अतः इन मिश्रित धातुओं का अत्याधिक प्रचलन रहा होगा।

तांबे से अनेक प्रकार की वस्तुएं बनायी जाती थी।[2] तांबे के बर्तन प्रचीन समय से भारत में प्रयोग किये जाते थें, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मुसलमानों के आगमन से उनका प्रयोग बड़े पैमाने पर होने लगा था क्योंकि वे लोग मध्य एशिया में इन बर्तनों का प्रयोग करते रहे थे। तांबे के बर्तनों पर कलई करने की कला का प्रचलन मुसलमानों ने ही किया। अबुल फजल ने बर्तन बनाने में तांबा धातु के उपयोग का उल्लेख किया है और उसने ये भी लिखा है कि शहरी रसोंई के बर्तन महीने में दो बार कलई किये जाते थे। जबकि टूटे हुए बर्तनों को ठठेरे के पास बदलने के लिए भेज दिया जाता था। संक्षेप में मुसलमानों द्वारा साधारणतया घरेलू कार्यों के लिए तांबे के बर्तनों को किराये पर देते थे। तांबे के बर्तनों का प्रयोग अर्क निकालने तथा शोरे को परिशुद्ध करने में भी किया जाता था।

हिन्दू परिवारों में पीतल अथवा फल के बर्तनों का चलन था। यह धातु तांबे से सस्ती होती थी और चूंकि इस पर कलई की अवश्यकता नहीं थी इसलिए इनका रख रखाव भी सस्ता था।[3] अतः अपेक्षाकृत समाज का एक बड़ा वर्ग इस मिश्रित धातु का प्रयोग करते थे। पीतल का प्रयोग धार्मिक दृष्टि से मुसलमानों के लिए ''मकरूह'' (अपवित्र) माना जाता है।

जहां तक कि इन बर्तनों के निर्माण का प्रश्न है सभी कस्बों और नगरों में इन्हें बनाया जताा था जिससे हर किसी की आवश्यकता की पूर्ति की जा सके। किन्तु कुछ शहरों के नाम इनके प्रमुख उत्पादन केन्द्र के रूप में गिनाए जा सकते हैं। बनारस में तांबे का उत्पादन अपेक्षाकृत अधिक था, जबकि लखनऊ और दिल्ली अपने तांबे के बर्तनों के लिए जाने जाते थे।

तांबे की तश्तरियों का प्रयोग बड़े–बडे महलों में अलंकरण सामग्री के रूप में होता था। उदाहरण के लिए ग्वालियर के एक महल के उत्कृष्ट गुम्बजों में इस धातु की तश्तरियां लगी हुई थीं आगरा किले के पूर्वी भाग में ऊपरी हिस्सा तांबे की पालिश की हुई प्लेटों से जड़ा हुआ था। इसी प्रकार दिल्ली स्थित रंग महल के सभी गुम्बज तांबे की प्लेटों से ढके हुए थे।[4] इस धातु का प्रयोग व्यक्तिगत अलंकरण के लिए भी किया जाता था। स्पष्ट है कि तांबे के आभूषणों का प्रयोग निर्धन परिवारों तक ही सीमित रहा होगा। इसके अतिरिक्त तांबे और इसकी मिश्रित धातुओं का प्रयोग हिन्दुओं द्वारा विभिन्न आकार की मूर्तियों को बनाने में किया जाता था।

तांबा धातु और इसकी मिश्रित धातुओं का प्रयोग बन्दूकों और तोपों के निर्माण में होता था। अन्य धातुओं की तुलना में हल्की होने के कारण इससे बने अस्त्र–शस्त्रों विशेषकर तोपों आदि को लोहे से बनी तोपों की तुलना में आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता था। इसके अतिरिक्त तांबा और इसकी मिश्रित धातुएं टिकाऊँ होती थीं और इनमें जंक नहीं लगता था। इन्हीं विषेशताओं के कारण ही सम्भवतः इनका प्रयोग बन्दूक और तोप बनाने में अधिक किया जाता था। मुगलकाल में हमें ऐसी बन्दूकों और तोपों का उल्लेख मिलता है जो यदि लोहे की नहीं तो तांबे और इसकी मिश्रित धातुओं से बनी होती थीं। यहां यह उल्लेखनीय है कि इनमें से कुछ छोटी युद्ध की बन्दूकें भी थीं। ये भी उल्लेख मिलता है कि औरंगजेब ने सात बड़ी बन्दूकों को बनाने के लिए आगरा के किले में लगी अकबर की तांबे की ईंटों का प्रयोग किया था। ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि कुछ बन्दूकों या तोपों में लोहे के साथ–साथ तांबे अथवा इसकी मिश्रित धातुओं का प्रयोग हुआ था। उपरोक्त उपयोगों के साथ–साथ तांबे का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपयोग जिस कार्य से सम्बन्धित था वह था सिक्कों को ढालना। तांबे के सिक्के विभिन्न नामों से बहुत पहले से प्रचलित थे जैसा कि मुद्रा विषयक सन्दर्भों से पता चलता है।[5] लेकिन इन सिक्कों का महत्व अकबर के काल से बढ़ना प्रारम्भ होता है। सम्राट अकबर द्वारा प्रारम्भ की गई राजस्व के नकद भुगतान की व्यवस्था के कारण सिक्कों का चलन काफी बढ़ गया और इसके लिए तांबे के सिक्कों को प्रयोग में लाया गया। वास्तव में तांबे का बना सिक्का, दाम (एक रूपये का 1/40वां भाग) चांदी के रूपये अथवा सोने की तुलना में अधिक चलन में था।[6] सरकारी तौर पर उस समय सोने, चांदी और तांबे के बने सिक्के प्रचलन में थे और इन्हीं में देश का सारा व्यापार किया जाता था। इनमें भी सर्वाधिक प्रयोग दाम का ही होता था। यहां तक की राजस्व सम्बन्धी भी सारा हिसाब किताब दाम में ही तैयार किया जाता था। तांबे के सिक्के अधिक प्रचलन में थे। यह तथ्य इस बात से भी स्पष्ट है कि उस समय तांबे के सिक्के ढालने वाली 44 टकसालें थीं जबकि सोने और चांदी के लिए इनकी कुल संख्या केवल 14 थी। प्रत्येक दाम का वजन एक तोला सात माशा और आठ सुर्ख होता था जबकि एक मन तांबे से 1170 अर्थात् प्रति सेर तीस दाम बनते थे।

निष्कर्ष

सत्रहवीं शताब्दी में कुछ स्थानीय खानों द्वारा काम बन्द कर देने के कारण तांबे के दाम तेजी से बढ़े और यह स्थिति और बिगड़ गई क्योंकि इस सामग्री का आयात भी अपर्याप्त था। आगामी शताब्दी के दौरान आयात की स्थिति में उस समय सुधार आया जब डच और अंग्रेजों की ईस्ट इण्डिया कम्पनियों द्वारा जापान से इस धातु की बहुत बड़ी मात्रा लाई गयी। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में जब पटना से चांदी के अत्याधिक अभाव के समाचार प्राप्त हो रहे थे उस समय तांबे की स्थिति सन्तोषजनक बनी हुई थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *ब्राउन एण्ड डे, इण्डियाज मिनरलवेल्थ, आक्सफोर्ड 1955, पृ0 146*
2. *पी0सी0रे0, हिस्ट्री ऑफ केमिस्ट्री, एन्शियन्ट एण्ड मेडिवल इण्डिया, कलकत्ता, 1956, पृ0 93*
3. *नरगिस, मुगलकालीन भारत में औद्योगिक विकास, लखनऊ 1993 पृ0 113*
4. *कीन, ए हैण्ड बुक फार विजीटर्स, देलही, एण्ड इट्स नेबरहुड कलकत्ता, 1899 पृ0 12*
5. *एन0राइट, द क्वाइनेज एण्ड मैट्रोजोजी आफ दि सुल्तानस् ऑफ देलही, दिल्ली 1936, पृ0 10–11*
6. *पेलसार्ट, जहागीरस इण्डिया, अनुवादक मोरलैण्ड तथा गैइल, कैम्ब्रिज, 1925, पृ0 29*